7. सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक नियंत्रण

सामाजिक परिवर्तन–अर्थ, विशेषताएँ, प्रकार, कारण एवं परिणाम

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत एवं अटल नियम है। प्रत्येक समाज में चाहे–अनचाहे परिवर्तन की प्रक्रिया चलती रहती है। विश्व में ऐसा कोई भी समाज नहीं है, जो परिवर्तन से अछूता रहा हो। समाज एक परिवर्तनशील व्यवस्था है।

परिवर्तन की इस शाश्वत प्रकृति को स्वीकार करते हुए मैकाइवर ने लिखा है, "समाज परिवर्तनशील एवं गत्यात्मक है।"

अर्थात् परिवर्तन एक अवश्यम्भावी प्रक्रिया है। संसार में प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है। भौतिक पदार्थों और अन्य प्राकृतिक रचनाओं में भी निरन्तर परिवर्तन होता है। अतः मानवकृत संस्कृति की धरोहर मानव समाज में परिवर्तन होना अत्यन्त स्वाभाविक है।

परिवर्तन क्या है?

किसी वस्तु, संगठन अथवा आकृति के ढाँचे में परिस्थितियों के अनुसार आयी भिन्नता को परिवर्तन कहते हैं। परिवर्तन एक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत कोई वस्तु, संगठन या आकृति समय बीतने के साथ ही बदलती रहती है। परिवर्तन को स्पष्ट करते हुए फिचर लिखते हैं, "संक्षेप में, परिवर्तन पहले की अवस्था या अस्तित्व के प्रकार में अन्तर आने को कहते हैं।"

परिवर्तन का सम्बन्ध प्रमुख रूप से तीन पक्षों से है–

1. वस्तु 2. समय 3. भिन्नता

एक समय से दूसरे समय में किसी वस्तु में प्रकट होने वाली भिन्नता ही परिवर्तन कहलाती है।

सामाजिक परिवर्तन का अर्थ

समाजशास्त्र के अन्तर्गत समाज का अध्ययन किया जाता है, अतः समाज में होने वाले परिवर्तन ही सामाजिक परिवर्तन कहलायेंगे।

हमने ऊपर अध्ययन किया है कि समाज परिवर्तनशील व्यवस्था है। अब तक के मानव समाज की विकास यात्रा को देखा जाये तो स्पष्ट होता है कि मानव परिवर्तन प्रेमी है।

समाजशास्त्र के विषय क्षेत्र में सामाजिक परिवर्तन प्रारम्भ से लेकर आज तक एक बहुत महत्वपूर्ण विषय रहा है।

सर्वप्रथम 1922 में डब्ल्यू. एफ. आगबर्न की पुस्तक 'सोशियल चेंज' में सामाजिक उद्विकास, सामाजिक परिवर्तन तथा परिवर्तन में भौतिक व अभौतिक संस्कृतियों के महत्व को प्रकाश में लाया गया। आगबर्न ने ही इनमें पाये जाने वाले भेद को स्पष्ट किया। उनके बाद विभिन्न समाजशास्त्रियों ने सामाजिक परिवर्तन की अलग–अलग परिभाषाएँ दी हैं।

मैकाइवर एवं पेज ने अपनी पुस्तक सोसायटी (Society) में सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन के द्वारा की है। उनके अनुसार समाज स्वयं ही "सामाजिक सम्बन्धों का जाल है।" अतः इन सम्बन्धों में होने वाला परिवर्तन ही सामाजिक परिवर्तन है।

मैकाइवर एवं पेज के शब्दों में " समाजशास्त्री होने के नाते हमारी विशेष रुचि प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक सम्बन्धों में है। केवल इन सामाजिक सम्बन्धों में होने वाले परिवर्तनों को ही हम सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। "

इन दोनों विद्वानों ने अपनी परिभाषा में सामाजिक सम्बन्धों पर ही अधिक जोर दिया है।

किंग्सले डेविस ने सामाजिक परिवर्तन का आधार सामाजिक संगठन को माना है। डेविस ने सामाजिक परिवर्तन को संरचनात्मक तथा प्रकार्यात्मक पक्ष के रूप में स्पष्ट किया है। सामाजिक संरचना के विभिन्न अंग जैसे समूह, समिति, संस्था तथा सदस्यों के अलग–अलग कार्य होते हैं। जब सामाजिक संरचना के ये विभिन्न अंग और उनके कार्यों में परिवर्तन होता है तो उसे सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। किंग्सले डेविस के शब्दों में "सामाजिक परिवर्तन से हम केवल उन्हीं परिवर्तनों को समझते हैं जो सामाजिक संगठन अर्थात् समाज के ढाँचे और प्रकार्यों में घटित होते हैं।"

गिलिन तथा गिलिन ने सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या सांस्कृतिक धरातल पर की है। उनके शब्दों में "सामाजिक परिवर्तन जीवन की मानी हुई रीतियों में परिवर्तन को कहते हैं। चाहे ये परिवर्तन भौगोलिक दशाओं में परिवर्तन से हुए हों या सांस्कृतिक साधनों, जनसंख्या की रचना या विचारधारा के परिवर्तन से या समूह के अंदर ही आविष्कार के फलस्वरूप हों।"

गिलिन तथा गिलिन ने सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या सांस्कृतिक संदर्भ के साथ–साथ परिवर्तन के अन्य कारक जैसे भौगोलिक कारक, जनसंख्यात्मक तथा प्रौद्योगिकीय आधार पर की है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सामाजिक परिवर्तन का सम्बन्ध रीतियों, प्रथाओं, मूल्यों, सामाजिक सम्बन्धों, व्यवहारों, कार्यविधियों, संरचना एवं प्रकार्यों, सामाजिक संगठन आदि में परिवर्तन से है।

संक्षेप में सामाजिक परिवर्तन–

1. समाज के ढाँचे व प्रकार्यों में होने वाला परिवर्तन
2. सामाजिक सम्बन्धों में होने वाला परिवर्तन
3. समाज के लोगों के रहन–सहन, रीति–रिवाजों, जीवन विधियों, मूल्यों व विश्वासों में होने वाला परिवर्तन है।

सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएँ

विलबर्ट मूर ने अपनी पुस्तक "सोशियल चेंज" में आधुनिक समाजों के संदर्भ में सामाजिक परिवर्तन की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है–

1. सामाजिक परिवर्तन एक अनिवार्य नियम है। इसका यह अर्थ नहीं है कि सामाजिक संरचना के सभी तत्व बदलें बल्कि सामाजिक संरचना के किसी न किसी अंग में परिवर्तन अवश्य होता रहता है।
2. प्राचीन समाजों की तुलना में आधुनिक समाजों में परिवर्तन अधिक स्पष्ट रूप से दिखायी देता है।
3. यद्यपि परिवर्तन का फैलाव सामाजिक जीवन के सभी पक्षों में होता है परन्तु विचारों और संस्थाओं की अपेक्षा भौतिक वस्तुओं में परिवर्तन की गति अधिक तीव्र होती है।
4. स्वाभाविक एवं सामान्य गति से होने वाले परिवर्तनों का प्रभाव हमारे विचारों एवं सामाजिक संरचना पर पड़ता है।
5. सामाजिक परिवर्तन का केवल अनुमान लगाया जा सकता है, उसके सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।
6. सामाजिक परिवर्तन गुणात्मक होता है।
7. आधुनिक समाजों में सामाजिक परिवर्तन को सामाजिक नियोजन के द्वारा नियन्त्रित कर इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में क्रियाशील बनाया जाता है।

सामाजिक परिवर्तन की महत्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. सामाजिक परिवर्तन एक विश्वव्यापी या सार्वभौमिक (Universal) प्रक्रिया है–मानव इतिहास में कोई भी समाज ऐसा नहीं रहा है जो परिवर्तन के दौर से नहीं गुजरा हो। पूर्णतः स्थिरता व स्थायित्व किसी भी समाज की विशेषता नहीं रही है। सामाजिक परिवर्तन एकविश्वव्यापी एवं सार्वभौमिक प्रक्रिया है। परिवर्तन की गति भले ही अलग–अलग समाजों में भिन्न–भिन्न हो सकती है, परन्तु परिवर्तन होता अवश्य है। आदिम समाजों में परिवर्तन की गति आधुनिक समाजों की तुलना में धीमी होती है।

2. सामाजिक परिवर्तन अवश्यम्भावी एवं स्वाभाविक है–सामाजिक परिवर्तन प्रत्येक समाज में अनिवार्यतः होता है। यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। मानव समाज प्रगति का आकांक्षी होता है और प्रगति के लिए स्थापित संरचना में परिवर्तन होना आवश्यक है। कई बार परिवर्तनों का विरोध भी किया जाता है फिर भी उसे रोक नहीं पाते। कभी ये परिवर्तन जान–बूझकर नियोजित रूप में लाये जाते हैं तो कभी स्वतः ही उत्पन्न होते हैं।

3. सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति सामाजिक है– सामाजिक परिवर्तन का सम्बन्ध किसी विशेष व्यक्ति या समूह, संस्था, जाति एवं प्रजाति एवं समिति में होने वाले परिवर्तन से नहीं है बल्कि सामाजिक परिवर्तन का सम्बन्ध सामुदायिक एवं समाज में होने वाले परिवर्तन से होता है।

सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति सामाजिक है न कि वैयक्तिक। अतः सम्पूर्ण समाज में घटित होने वाला परिवर्तन ही सामाजिक परिवर्तन कहा जायेगा।

4. सामाजिक परिवर्तन की भविष्यवाणी नहीं कर सकते हैं–सामाजिक परिवर्तन के बारे में पूर्वानुमान करना कठिन है। समाज में शिक्षा के प्रभावस्वरूप कौन–कौन से परिवर्तन होंगे, कब होंगे इसके बारे में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। यह बताना भी कठिन होगा कि आगे चलकर लोगों के विश्वासों, मूल्यों, विचारों, आदर्शों, रीति–रिवाजों, संस्कृति आदि में किस प्रकार के परिवर्तन आयेंगे।

भविष्य में जाति प्रथा का अस्तित्व रहेगा या नहीं, अन्तर्जातीय विवाह में वृद्धि होगी या नहीं आदि परिवर्तनों के बारे में केवल पूर्वानुमान ही लगाया जा सकता है, निश्चित भविष्यवाणी नहीं की जा सकती।

5. सामाजिक परिवर्तन एक जटिल तथ्य है–समाज में घटित होने वाले परिवर्तनों को मापना कठिन है क्योंकि इसका सम्बन्ध गुणात्मक परिवर्तनों से है। संस्कृति के विभिन्न पक्षों, सामाजिक मूल्यों, संस्थाओं, विचारों व व्यवहारों में होने वाले परिवर्तन को मीटर, क्विंटल या किलोग्राम की भाषा से प्रदर्शित नहीं कर सकते। अतः सामाजिक परिवर्तन एक जटिल तथ्य है।

6. सामाजिक परिवर्तन की गति असमान तथा तुलनात्मक है–सामाजिक परिवर्तन सभी समाजों में पाया जाता है परन्तु परिवर्तन की गति अलग–अलग समाजों में असमान होती है। ग्रामीण समाजों की अपेक्षा नगरों में, आदिम की अपेक्षा आधुनिक में, पूर्वी समाजों की अपेक्षा पश्चिमी समाजों में परिवर्तनों की गति तुलनात्मक रूप से भिन्न–भिन्न होती है।

परिवर्तन गति असमान होने के कारण यह है कि प्रत्येक समाज में परिवर्तन लाने वाले कारक भिन्न–भिन्न होते हैं। हम विभिन्न समाजों की तुलना करके परिवर्तन की गति का अनुमान लगा सकते हैं।

इसी आधार पर हम कह सकते हैं कि गाँवों की तुलना में शहरों में परिवर्तन तीव्र गति से आ रहे हैं।

सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न प्रतिमान या प्रकार

1. रेखीय परिवर्तन (प्रथम प्रतिमान)
2. उतार–चढ़ाव वाला परिवर्तन (द्वितीय प्रतिमान)
3. चक्रीय परिवर्तन (तृतीय प्रतिमान)

1. रेखीय परिवर्तन (प्रथम प्रतिमान)–यह सामाजिक परिवर्तन का वह स्वरूप है जो परिवर्तन के एक क्रम को दर्शाता है। ऐसे परिवर्तन एक ही दिशा में निरन्तर बढ़ते जाते हैं, चाहे ऐसे परिवर्तन का प्रारम्भ एकाएक ही क्यों न हुआ हो। आविष्कारों से उत्पन्न परिवर्तनों को रेखीय परिवर्तन की श्रेणी में रख सकते हैं। जब भी समाज में कोई नवीन आविष्कार होता है, तो समाज में एकाएक ही परिवर्तन तो आता ही है साथ ही अनेक आगामी परिवर्तनों का सिलसिला

भी उत्पन्न हो जाता है। जैसे–जैसे आविष्कारों में समय–समय पर कई लोगों द्वारा सुधार किया जाता है, वैसे–वैसे परिवर्तन का सिलसिला लगातार आगे बढ़ता रहता है। टेलीविजन के आविष्कार से हम सभी परिचित हैं। सबसे पहले ब्लेक एण्ड व्हाइट टीवी आया, उसके बाद रंगीन टीवी, फिर एलसीडी टीवी तथा सबके बाद एलईडी टीवी का आविष्कार हुआ। चूंकि सामाजिक परिवर्तन के इस प्रतिमान के अन्तर्गत परिवर्तन निरन्तर एक ही दिशा में होता रहता है, इस कारण इसे रेखीय परिवर्तन कहा जाता है।

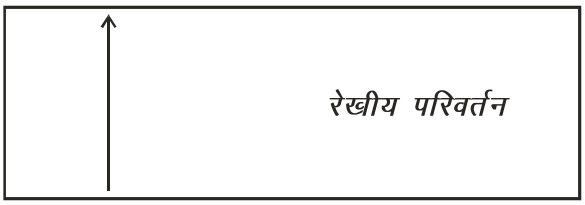

यातायात के साधनों में भी रेखीय परिवर्तन को देखा जा सकता है। जब पहियों का आविष्कार हुआ तो सबसे पहले बैलगाड़ी, फिर इक्का तांगा, साईकिल, कार, बस, रेलगाड़ी, हवाई–जहाज आदि अनेक साधनों का विकास हुआ।

2. उतार–चढ़ाव वाला परिवर्तन (द्वितीय प्रतिमान)– सामाजिक परिवर्तन के इस प्रकार के अन्तर्गत परिवर्तन लगातार एक ही दिशा में आगे बढ़ने के बजाय पहले ऊपर की ओर जाता है और फिर नीचे की ओर। इसे हम उतार–चढ़ाव वाला परिवर्तन कहते हैं। जनसंख्या के क्षेत्र में हम इस प्रकार के उतार–चढ़ाव को देख सकते हैं। इसी प्रकार सांस्कृतिक क्षेत्र में पहले भारतवासी अध्यात्मवाद की ओर निरन्तर आगे बढ़ते गये, परन्तु अब भौतिकवाद की ओर तेजी से बढ़ रहे हैं। इसी प्रकार हम आर्थिक एवं व्यापारिक क्रियाओं को उन्नत, विकसित और अवनत होते हुए देख सकते हैं। परिवर्तन के इस प्रतिमान में परिवर्तन की दिशा निश्चित नहीं होती है। सामाजिक परिवर्तन की दिशा किस ओर जायेगी यह कहना कठिन होता है।

3. चक्रीय परिवर्तन (तृतीय प्रतिमान)–परिवर्तन के तीसरे प्रकार को तरंगीय परिवर्तन के नाम से भी जाना जाता है। इस प्रकार के परिवर्तन का एक चक्र चलता है। ऋतु–चक्र में हम देखते हैं कि सर्दी, गर्मी एवं वर्षा का एक चक्रीय क्रम चलता रहता है। मनुष्य के जीवन में भी यह चक्र जन्म, बाल्यावस्था, यौवनावस्था, वृद्धावस्था एवं मृत्यु के रूप में देखा जा सकता है। इस परिवर्तन का स्वरूप परिवर्तनशील है, कभी यह परिवर्तन एक तरंग के रूप में उतार–चढ़ाव वाला होता है, तो कभी समुद्र की लहरों की भांति आता–जाता रहता है। जिस प्रकार समुद्र की लहरों का अंत और ह्रास नहीं होता है, उसी प्रकार चक्रीय परिवर्तन में भी एक के बाद दूसरा परिवर्तन आता रहता है।

चक्रीय परिवर्तन को समझने के लिए हम ''फैशन की दुनिया'' का उदाहरण ले सकते हैं। फैशन की दुनिया में नये–नये फैशन की लहर या तरंग आती रहती है और प्रत्येक के बाद कुछ नया परिवर्तन हो जाता है। सांस्कृतिक आन्दोलनों, साज–सज्जा, अलंकरणों, सामाजिक मूल्यों, प्रथाओं, लोकाचारों आदि इसी प्रकार के परिवर्तन के उदाहरण है।

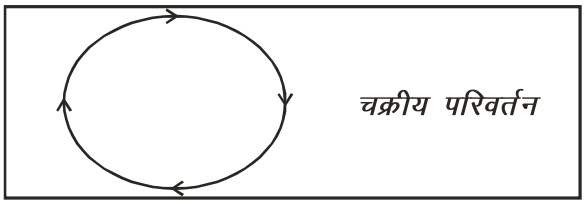

यद्यपि विद्वान आज चक्रीय परिवर्तन की बात को पूरी तरह से स्वीकार नहीं करते हैं। इसका कारण यह है कि चक्रीय का अर्थ है जहाँ से प्रारम्भ होते हैं घूम फिर कर पुनः वहीं लौटना। परन्तु यह संभव नहीं है क्योंकि पुनः हम उसी स्थिति में कभी नहीं लौटते बल्कि उसमें कुछ संशोधन या परिवर्तन के बाद ही उस स्थिति को स्वीकार करते हैं।

सामाजिक परिवर्तन के कारण एवं परिणाम

सामाजिक परिवर्तन के कारण निम्नलिखित है–

1. प्राकृतिक या भौगोलिक कारक
2. जनसंख्यात्मक कारक
3. सांस्कृतिक कारक
4. प्रौद्योगीकीय कारक
5. आर्थिक कारक

1. प्राकृतिक या भौगोलिक कारक–प्रकृति परिवर्तनशील है। प्रकृति में जंगल, पहाड़, आकाश, चाँद–तारे, नदी, झरने, मौसम, समुद्र, भूकम्प, बाढ़, अकाल, अनावृष्टि, अतिवृष्टि आदि सम्मिलित हैं। ये सभी मिलकर प्राकृतिक पर्यावरण की रचना करते हैं।

सामाजिक परिवर्तन लाने में ये प्राकृतिक शक्तियाँ महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। मनुष्य ने हमेशा से ही प्रकृति पर विजय पाने का प्रयास किया है लेकिन मनुष्य इसमें पूर्णतः सफलता प्राप्त करने में असमर्थ रहा है। अनेक सामाजिक परिवर्तन प्राकृतिक कारणों से होते हैं अर्थात् प्रकृति समाज को परिवर्तन की प्रेरणा देती है। उदाहरण के लिए जब बाढ़ आती है या भूकम्प आता है अथवा अनावृष्टि होती है तब बहुत से परिवार उजड़ जाते हैं और उनके सम्बन्ध बिखर जाते हैं। वे लोग नये लोगों से मिलते हैं और नये सम्बन्ध बनाते हैं, जिससे विवाह, परिवार और नातेदारी जैसी समाजिक संस्थाओं में

परिवर्तन आता है। गुजरात के कच्छ में आये भूकम्प एवं तमिलनाडु में आयी सुनामी लहरों से हजारों लोग बेघरबार हो गये, कई बच्चे अनाथ हो गये, स्त्रियाँ विधवा हो गई। लोगों को आवास की तलाश में नये स्थानों पर जाना पड़ा। जिससे उनका नये लोगों से सम्पर्क बढ़ा तथा नये सम्बन्ध विकसित हुए।

जूलियन हक्सले का मत है कि जलवायु और भूमि का मानवीय सम्बन्धों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्राकृतिक एवं भौगोलिक कारक हमारे स्वास्थ्य, मानसिक व शारीरिक क्षमता, संस्कृति व सभ्यता, खान–पान, रहन–सहन, वस्त्र, फैशन, भोजन, भवनों की बनावट तथा आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक संरचना को प्रभावित करते हैं।

प्राकृतिक विपदाओं के कारण भौगोलिक गतिशीलता का भी विकास होता है जिससे व्यक्ति एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान को चले जाते हैं और वहाँ की संस्कृति को अपना लेते हैं।

2. जनसंख्यात्मक कारक–बिना जनसंख्या के किसी भी समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है। सामाजिक परिवर्तन लाने में जनसंख्यात्मक कारकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। जब किसी देश की जनसंख्यात्मक संरचना जिसमें जनसंख्या का आकार, जन्मदर, मृत्युदर, आवास–प्रवास, स्त्री–पुरुष अनुपात विभिन्न आयु समूह का अनुपात आदि सम्मिलित है, इनमें परिवर्तन आता है तो उसकी सामाजिक संरचना, सामाजिक संगठन तथा अर्थव्यवस्था भी प्रभावित होती है।

यदि जन्म दर बढ़ती है तथा मृत्यु दर कम होती है तो जनसंख्या वृद्धि होती है। जनसंख्या वृद्धि से समाज में गरीबी व बेरोजगारी उत्पन्न होती है। गरीबी समाज में संघर्ष व तनाव को जन्म देती है इस सम्बन्ध में ''माल्थस'' ने अपनी पुस्तक ''ऐस्से आन पापुलेशन'' में अपना मत दिया है कि जनसंख्या में ज्यामितिय (2, 4, 8, 16.....) वृद्धि होती है जबकि कृषि उत्पादन में वृद्धि गणितीय (2, 4, 6, 8, ...) रूप से होती है। जिससे जनसंख्या दर खाद्य पदार्थों की वृद्धि से हमेशा ही अधिक रहती है। रोजगार की तलाश में लोग गाँव से शहर जाते हैं। इससे शहरी जनसंख्या में वृद्धि होती है। आवास बदलने से विभिन्न धर्मों, मूल्यों, मतों, परिवारों, प्रजातियों के बीच सम्पर्क बढ़ता है। इससे विभिन्न संस्कृतियों के बीच सांस्कृतिक आदान–प्रदान होता है, जिससे सामाजिक परिवर्तन घटित होते हैं।

उत्तम स्वास्थ्य सुविधाएँ न मिलने से मृत्युदर में वृद्धि होती है। फलस्वरूप देश में अनुभवी व कार्यकुशल लोगों में कमी आती है। देश की विभिन्न सरकारी नीतियों पर जनसंख्यात्मक कारकों का प्रभाव पड़ता है जैसे भारत में गिरते हुए स्त्री–पुरुष अनुपात की चिन्ताजनक स्थिति को ध्यान में रखते हुए प्रसव पूर्व लिंग परीक्षण पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। जिससे कन्या भ्रूण हत्या जैसे अपराधों में कमी आयी है।

3. सांस्कृतिक कारक–सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न कारकों में सांस्कृतिक कारकों का विशेष महत्व है। संस्कृति के बिना किसी भी समाज की कल्पना करना व्यर्थ है। सामाजिक जीवन को सांस्कृतिक जीवन से पृथक नहीं किया जा सकता है।

संस्कृति में सम्मिलित आदर्श, विश्वास, धर्म, प्रथाएँ, संस्थाएँ, रूढ़ियाँ आदि हमारे सांस्कृतिक जीवन का प्रतिबिम्ब हैं। इनके बिना न तो सामाजिक अन्तः क्रिया हो सकती है और न ही सम्बन्ध स्थापित हो सकते हैं। सांस्कृतिक कारक किसी भी समाज के ढांचे और संगठन में परिवर्तन को प्रभावित करते हैं। इसका प्रभाव भारतीय जाति व्यवस्था और सम्पूर्ण सामाजिक जीवन पर स्पष्टतः देखा जा सकता है।

मैक्स वेबर का मत है कि सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्तन से सिर्फ समाज एवं संस्कृति में ही नहीं बल्कि अर्थव्यवस्था में भी परिवर्तन आता है। उन्होंने पाश्चात्य देशों में पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के विकास में प्रोटेस्टेट आचार संहिता की भूमिका को समझाया है। मैक्स वेबर ने धर्म और आर्थिक जीवन के बीच गहरा सम्बन्ध दर्शाया है।

सांस्कृतिक कारक ही प्रौद्योगिक विकास के स्वरूप एवं गति को भी निर्धारित करते हैं क्योंकि किसी भी समाज की संस्कृति में पाये जाने वाले मूल्य, आदर्श, विश्वास, परम्पराएँ, व प्रथाएँ जैसे होंगे उसी के अनुरूप वहाँ का प्रौद्योगिक विकास होगा। अमेरिकन समाजशास्त्री ऑगबर्न ने अपनी पुस्तक Social Change में सांस्कृतिक विलम्बना के आधार पर सामाजिक परिवर्तन में सांस्कृतिक कारकों की भूमिका को स्पष्ट किया है। उनके अनुसार जब संस्कृति के भौतिक पक्ष की तुलना में अभौतिक पक्ष पीछे रह जाता है तो संस्कृति में असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसे सांस्कृतिक विलम्बना या सांस्कृतिक पिछड़ापन कहा जाता है। इस स्थिति के कारण समाज में अनेक परिवर्तन घटित होते हैं।

4. प्रौद्योगिकीय कारक– सामाजिक परिवर्तन का यह सबसे मुख्य कारक है। मानव अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए जिन यंत्रों, मशीनों व उपकरणों का प्रयोग करता है, उससे संबन्धित ज्ञान ही प्रौद्योगिकी कहलाता है। विश्व में कोई भी समाज प्रौद्योगिकीय ज्ञान से अछूता नहीं है। मानव ने प्रौद्योगिकीय ज्ञान के माध्यम से जीवन को सुखद बनाया है। मार्क्स का मत है कि प्रौद्योगिकी में परिवर्तन के फलस्वरूप समाज में भी परिवर्तन आता है। आदिम समाज से आधुनिक समाज तक मानव ने विभिन्न प्रौद्योगिकीय ज्ञान का विकास किया है। प्रौद्योगिकी के कारण नये–नये कारखाने खुलते हैं, जिससे नगरीकरण, एकाकी परिवारों में वृद्धि व स्त्रियों की स्वतंत्रता में वृद्धि होती है। प्रौद्योगिकीय कारकों से सामाजिक गतिशीलता में भी वृद्धि हुई है। इससे संचार व परिवहन के साधनों को बढ़ावा मिला है।

मैकाइवर एवं पेज के अनुसार–किसी भी नयी मशीन का आविष्कार सामाजिक जीवन में परिवर्तनों को जन्म देता है। औद्योगीकरण से पूर्व ग्रामीण समुदाय का जीवन आत्म निर्भर था व सामाजिक सम्बन्धों का क्षेत्र भी सीमित था। नई प्रौद्योगिकी का विकास होने से क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए है। विभिन्न सामाजिक संस्थाओं, जाति, विवाह, परिवार, धर्म, परम्परा आदि में व्यापक परिवर्तन हुए हैं, जिनका कुछ समय पूर्व अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता था। तकनीकी विकास और उत्पादन के लिए कारखानों और मशीनों की आवश्यकता के कारण श्रम विभाजन और विशेषीकरण की प्रक्रिया को बढावा मिला है।

इस प्रकार कहा जा सकता है प्रौद्योगिकी समाज में परिवर्तन लाने वाला प्रमुख घटक है।

5. आर्थिक कारक– जिस प्रकार से मानव का शरीर विभिन्न अंगों से मिलकर बनता है उसी प्रकार आर्थिक संरचना भी उपभोग, वितरण, माँग, विनिमय व आर्थिक नीति आदि से मिलकर निर्मित है जैसे ही आर्थिक संरचना में परिवर्तन होता है तो सामाजिक संस्थाओं, व्यवस्थाओं व संगठनों में भी परिवर्तन आता है। औद्योगीकरण व नगरीकरण के फलस्वरूप भारत में संयुक्त परिवार व्यवस्था का विघटन हुआ, जाति–पाति के बंधनों में शिथिलता आई, स्त्री शिक्षा का प्रसार हुआ, अन्तर्जातीय विवाह को बढ़ावा मिला, स्त्रियों को रोजगार के विभिन्न अवसर प्राप्त हुए, जनसंख्या की गतिशीलता बढ़ी है। इससे समाज की विभिन्न संस्थाओं में परिवर्तन घटित हुआ है।

कार्ल मार्क्स ने भी सामाजिक परिवर्तन में आर्थिक कारकों को महत्वपूर्ण माना है। मार्क्स के शब्दों में ''समाज में परिवर्तन अकस्मात् नहीं होते बल्कि बाहरी प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों की भांति कुछ विशिष्ट नियमों से संचालित होते हैं।''

मार्क्स ने अपने सिद्धान्तों में आर्थिक कारकों को प्रमुखता दी है, इसलिए इनके सिद्धान्त को आर्थिक निर्धारणवादी सिद्धान्त कहते हैं। उनके अनुसार समाज की विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक संस्थाओं के निर्माण में आर्थिक तत्व अर्थात् उत्पादन व वितरण प्रणालियों का योगदान रहता है। उत्पादन प्रणाली में दो प्रकार के वर्ग पूँजीपति व श्रमिक का अस्तित्व रहा है। इन दोनों वर्गों में संघर्ष होता रहता है, जिससे नई सामाजिक व्यवस्था का उदय होता है। इसी आधार पर मार्क्स ने इतिहास की व्याख्या की है तथा सामाजिक परिवर्तन को समझाया है।

आर्थिक कारकों का प्रभाव राजनीतिक व्यवस्था पर भी पड़ता है। राज्य में कानून, संविधान, नियम आदि आर्थिक कारकों से ही प्रेरित होते हैं। राज्य कानूनों व योजनाओं का निर्माण करते वक्त उस समाज में रहने वाले लोगों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखता है।

निम्न आर्थिक स्थिति व उच्च जीवन स्तर की लालसा व्यक्ति को अपराध करने को विवश करती है। विलियम बोंजर तथा फोरेन सारी डी वर्सी ने अपने अध्ययन में पाया कि अधिकांश अपराधियों ने गरीबी एवं निम्न आर्थिक स्थिति के कारण अपराध किया। इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सम्पत्ति का वितरण, जीवन स्तर, जीवन विधि, उत्पादन, व्यापार, वर्ग संघर्ष आदि समाज के आर्थिक पक्षों पर निर्भर करते हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि किसी भी समाज में होने वाले सामाजिक परिवर्तन भौगोलिक, जनसंख्यात्मक, प्रौद्योगिकीय, आर्थिक एवं सांस्कृतिक आदि अनेक कारकों से प्रभावित होते हैं। ये सभी कारक भी परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। परिवर्तन के विभिन्न कारकों के फलस्वरूप ही व्यक्ति के सामाजिक, सांस्कृतिक, पारिवारिक, आर्थिक, राजनीतिक व धार्मिक जीवन में परिवर्तन आते हैं। परिवर्तन सभी समाजों व सभी कालों में पाया जाता है। यह मानव जीवन का एक अनिवार्य तथ्य है जिसमें निरन्तरता पायी जाती है।

सामाजिक नियंत्रण अर्थ, विशेषताएँ, प्रकार एवं अभिकरण

सामाजिक नियंत्रण समाजशास्त्र की एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा है। समाज में सन्तुलन व व्यवस्था बनाये रखने के लिए समाज के सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित किया जाता है। समाज को अव्यवस्था से बचाने तथा भविष्य में उसके अस्तित्व को कायम रखने के लिए समाज कुछ सामाजिक नियमों का विधान करता है। प्रत्येक समाज अपने सदस्यों से इन नियमों के पालन की अपेक्षा रखता है। समाज की यह अपेक्षा भी रहती है कि समूह के सदस्य अपनी संस्कृति के अनुरूप व्यवहार प्रतिमानों, प्रथाओं, मूल्यों, आदर्शों, रीति–रिवाजों एवं कानून के अनुरूप आचरण करेंगे। इससे समाज में स्थायित्व एवं व्यवस्था बनाये रखने में मदद मिलेगी। परन्तु कुछ स्वार्थी, अराजक व संघर्षवादी तत्व समाज में अव्यवस्था फैलाने की कोशिश करते हैं, जिन्हें रोकने के लिए सामाजिक नियंत्रण आवश्यक है।

लोगों को समूह द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार आचरण करने के लिए बाध्य करना ही सामाजिक नियंत्रण कहलाता है। सामाजिक नियंत्रण की अवधारणा का प्रतिपादन सर्वप्रथम अमेरिकन समाजशास्त्री ई.ए. रॉस ने 1901 में अपनी कृति 'Social control' में व्यवस्थित ढंग से किया है। तब से सामाजिक नियंत्रण समाजशास्त्र में एक प्रमुख विषय के रूप में चर्चित रहा है।

रॉस के अनुसार, ''सामाजिक नियन्त्रण का तात्पर्य उन सभी शक्तियों से है जिनके द्वारा समुदाय व्यक्ति को अपने अनुरूप बनाता है।'' पी.एच. लैण्डिस के शब्दों में ''सामाजिक नियन्त्रण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा सामाजिक व्यवस्था स्थापित की जाती है और बनाये रखी जाती है।'' पारसन्स ने अपनी पुस्तक 'सोशियल सिस्टम' (Social system) में

सामाजिक नियंत्रण की परिभाषा देते हुए कहा है, ''सामाजिक नियन्त्रण वह सामान्य प्रक्रिया है जिसके द्वारा अपेक्षित व्यवहार एवं किये गये व्यवहार के बीच अन्तर को कम से कम किया जाता है।''

उनके अनुसार, ''विपथगामी प्रवृत्तियों की कली को फूल बनने से पहले ही कुचल देना सामाजिक नियन्त्रण है।'' निम्न परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि सामाजिक नियन्त्रण के द्वारा ही समाज में एकता एवं व्यवस्था बनी रह सकती है। इससे ही समाज के लोग सामाजिक प्रतिमानों के अनुकूल व्यवहार करते हैं व सामाजिक नियमों का पालन करते हैं। सामाजिक नियन्त्रण समाज में लोगों के व्यवहारों में एकरूपता लाता है।

- सामाजिक नियंत्रण की विशेषताएँ– सामाजिक नियंत्रण समाज के लोगों को सामाजिक प्रतिमानों के अनुरूप आचरण करने लिए बाध्य करता है। सामाजिक प्रतिमान ही समाज के लोगों के व्यवहार को नियंत्रित करते हैं।
- सामाजिक नियंत्रण से समाज में संगठन एवं एकरूपता लायी जाती है। लोगों को समाज के नियमों के अनुकूल व्यवहार करना सिखाया जाता है।
- सामाजिक नियंत्रण से सामाजिक सम्बन्धों में एकरूपता व स्थिरता स्थापित की जाती है।
- सामाजिक नियंत्रण के द्वारा समाज में तनाव व संघर्ष को कम किया जाता है तथा सहयोग को बढ़ाने का प्रयास किया जाता है।
- सामाजिक नियंत्रण में व्यक्तियों के व्यवहारों व आचरणों को नियंत्रित करने के लिए निश्चित साधनों व विधियों का उपयोग किया जाता है।
- सामाजिक नियंत्रण तीन स्तरों पर होता है समूह का समूह पर नियंत्रण, समूह का व्यक्तियों पर नियंत्रण तथा व्यक्तियों का व्यक्तियों पर नियंत्रण।
- सामाजिक नियंत्रण द्वारा विघटनकारी प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाया जाता है।
- सामाजिक नियंत्रण में दण्ड एवं पुरस्कार दोनों विधियों का प्रयोग किया जाता है।

सामाजिक नियंत्रण के प्रकार–सभी समाजों में व्यवस्था व सन्तुलन बनाये रखने हेतु सामाजिक नियंत्रण आवश्यक होता है। किन्तु प्रत्येक समाज में सामाजिक सम्बन्धों की प्रकृति, सामाजिक दशाओं एवं व्यक्तिगत व्यवहारों में भिन्नता पायी जाती है, जिसके कारण सामाजिक नियंत्रण के स्वरूपों या प्रकारों में भी अन्तर आ जाता है। समाज के सदस्यों के हितों, विचारों व उद्देश्यों में विभिन्नता होती है साथ ही अलग–अलग प्रकार के समाज जैसे ग्रामीण व नगरीय, परम्परात्मक, बन्द व मुक्त, जनतांत्रिक एवं एकतंत्र आदि में एक ही प्रकार के नियन्त्रण से व्यवहारों को नियमित नहीं किया जा सकता। अतः समाजशास्त्रियों ने नियंत्रण के विभिन्न प्रकारों व स्वरूपों का उल्लेख किया है।

सकारात्मक और नकारात्मक सामाजिक नियंत्रण– सामाजिक नियंत्रण के सकारात्मक व नकारात्मक स्वरूप का उल्लेख किम्बाल यंग ने किया है। सामाजिक नियंत्रण का वह स्वरूप जिसमें सलाह, अनुनय, शिक्षा एवं पुरस्कार के द्वारा व्यक्तियों के व्यवहार को नियंत्रित किया जाता है, सकारात्मक सामाजिक नियंत्रण कहलाता है। सकारात्मक सामाजिक नियंत्रण में व्यक्ति को पुरस्कार प्रदान कर समाज सम्मत व्यवहार करने के लिए प्रेरित किया जाता है। यह नियंत्रण प्रायः परिवार, मित्रों एवं शिक्षा संस्थानों के द्वारा किया जाता है। नकारात्मक सामाजिक नियंत्रण के अंतर्गत नियंत्रण के लिए दण्ड का प्रावधान रहता है। इसमें समाज विरोधी व असामान्य व्यवहार करने वालों को दण्डित किया जाता है। नकारात्मक नियंत्रण के साधन दण्ड, जुर्माना, उपहास, बहिष्कार, जेल आदि है।

चेतन और अचेतन सामाजिक नियंत्रण–अमेरिकन समाजशास्त्री सी.एच.कूले ने सामाजिक नियंत्रण के चेतन व अचेतन स्वरूपों का उल्लेख किया है। उनके अनुसार मानव के व्यवहार को दो भागों में बाँटा जा सकता है– चेतन व अचेतन व्यवहार। पहली स्थिति में व्यक्ति व्यवहार करते वक्त सोचता है। वह ध्यान रखता है कि उससे व्यवहार करते वक्त कोई त्रुटि न हो जाये। जबकि कुछ विचार, आदर्श व मूल्य व्यक्ति के व्यक्तित्व के अंग बन जाते हैं। जिनका पालन वह अचेतन रूप में ही करता रहता है। प्रथाओं, कानूनों और लोकाचारों द्वारा चेतन नियंत्रण किया जाता है क्योंकि ये समूह कल्याण के लिए आवश्यक है।

प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष नियन्त्रण–कार्ल मानहीम ने सामाजिक नियन्त्रण के प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष स्वरूप का उल्लेख अपनी पुस्तक "Man and society" में किया है। माता–पिता, मित्र, पड़ौसी, गुरूजनों आदि प्राथमिक समूहों के द्वारा किया जाने वाला नियंत्रण प्रत्यक्ष सामाजिक नियंत्रण कहलाता है। इस प्रकार के नियन्त्रण का प्रभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व पर अधिक गहराई से पड़ता है क्योंकि प्राथमिक समूह के सदस्य व्यक्ति के समाजीकरण के माध्यम हैं। द्वितीयक समूहों व संस्थाओं द्वारा लागू किया जाने वाला नियन्त्रण अप्रत्यक्ष नियंत्रण कहलाता है। आधुनिक समाजों में अप्रत्यक्ष नियंत्रण के द्वारा ही व्यक्तियों को विशेष प्रकार के व्यवहार करने को बाध्य किया जाता है।

संगठित, असंगठित तथा सहज नियन्त्रण–गुरविच तथा मूर ने सामाजिक नियंत्रण के तीन स्वरूप यथा संगठित, असंगठित और सहज नियंत्रण का उल्लेख किया है। संगठित सामाजिक नियंत्रण अनेक छोटी–बड़ी एजेन्सियों और व्यापक नियमों द्वारा व्यक्तियों के व्यवहार को प्रभावित करता है। यह नियंत्रण अत्यधिक नियमबद्ध होता है तथा विवाह, परिवार, स्कूल व दफ्तर की संस्थाओं द्वारा लगाये गये नियम संगठित नियन्त्रण के अन्तर्गत ही आते हैं। दैनिक जीवन को सर्वाधिक

प्रभावित करने वाले संस्कार, जनरीतियाँ, परम्पराएँ, लोकाचार आदि द्वारा किया जाने वाला नियंत्रण असंगठित सामाजिक नियंत्रण कहलाता है। नियंत्रण के तीसरे स्वरूप का आधार व्यक्ति की स्व प्रेरणा है। विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं और अनुभव के आधार पर स्वविवेक से निर्णय लेता है तथा अपने व्यवहार को नियन्त्रित करता है।

औपचारिक एवं अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण– कुछ समाजशास्त्रियों ने सामाजिक नियंत्रण के औपचारिक व अनौपचारिक दो स्वरूपों का उल्लेख किया है। औपचारिक नियंत्रण निश्चित लिखित कानूनों द्वारा सम्पन्न होता है। इसके पीछे राज्य एवं सरकार की शक्ति होती है। औपचारिक नियंत्रण व्यक्ति एवं समाज के लिए बाध्यतामूलक होते हैं इनका पालन न करने पर दण्ड की व्यवस्था होती है। औपचारिक नियंत्रण स्थापित करने के लिए औपचारिक संस्थाओं यथा राज्य, कानून, पुलिस, जेल, न्यायालय आदि की व्यवस्था होती है।

अनौपचारिक नियंत्रण का सम्बन्ध राज्य से न होकर समाज और समूह से होता है। यह अलिखित तथा असंगठित होते हैं। इस प्रकार के नियंत्रण के पीछे सरकार व राज्य की सत्ता नहीं होती है। अनौपचारिक नियंत्रण का विकास समय के साथ–साथ स्वतः ही होता है। प्रथाएँ, जनरीतियाँ, सामाजिक मानदण्ड, धर्म, नैतिकता, हास्य, व्यंग्य, जनमत आदि अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण के साधन हैं। सामाजिक नियम समूह तथा समाज कल्याण की दृष्टि से आवश्यक एवं उपयोगी होते हैं अतः अपने समूह को अप्रसन्न न करने की दृष्टि से व्यक्ति अनौपचारिक नियंत्रण को स्वीकार करता है। ग्रामीण, आदिम व सरल समाजों में इस प्रकार का नियंत्रण अधिक प्रभावी होता है। अनौपचारिक नियंत्रण में समाज व समूह के सदस्य सजग प्रहरी की भाँति समूह के सदस्यों द्वारा सामाजिक नियमों के पालन की निगरानी रखते हैं।

औपचारिक और अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण में अन्तर–

- औपचारिक सामाजिक नियंत्रण में कानून लिखित एवं निश्चित होते हैं, इसके विपरीत अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण में नियम अलिखित व अस्पष्ट होते हैं।
- औपचारिक सामाजिक नियंत्रण में दण्ड देने का कार्य सरकार व राज्य द्वारा किया जाता है जबकि अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण में दण्ड स्वयं समाज, समूह व समुदाय द्वारा निश्चित किया जाता है।
- औपचारिक सामाजिक नियंत्रण आधुनिक, औद्योगिक, जटिल व विस्तृत समाजों की विशेषता है, जबकि अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण सरल, छोटे व परम्परागत समाजों की देन है।
- औपचारिक सामाजिक नियंत्रण में कानून योजनाबद्ध रूप से राज्य या अन्य प्रशासनिक संगठनों द्वारा बनाये जाते हैं, इसके विपरीत अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण में नियमों का विकास धीरे–धीरे स्वतः ही होता है जिनका स्त्रोत स्वयं समाज ही है।
- औपचारिक नियंत्रण के साधन कानून, न्यायालय व पुलिस है यही दण्ड सुनिश्चित करते हैं। जबकि अनौपचारिक नियंत्रण में सामाजिक प्रतिमान, परम्पराएँ, धर्म आदि के द्वारा आलोचना, निंदा व बहिष्कार के द्वारा मानव व्यवहार को नियंत्रित किया जाता है।

सामाजिक नियंत्रण के अभिकरण

- हम ऊपर अध्याय में सामाजिक नियंत्रण के विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन कर चुके हैं। हम यह भी जानते हैं कि जिस माध्यम से समाज में व्यक्तियों के व्यवहार को नियंत्रित किया जाता है वे सभी सामाजिक नियंत्रण के साधन या अभिकरण कहलाते हैं। ये साधन प्रत्यक्ष– अप्रत्यक्ष, सकारात्मक– नकारात्मक, संगठित– असंगठित तथा अनौपचारिक–औपचारिक रूप से व्यक्तियों के व्यवहार को नियंत्रित कर सामाजिक नियंत्रण को कायम रखते हैं–

1. परिवार– सामाजिक नियंत्रण में परिवार की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जन्म से ही बालक किसी न किसी परिवार का सदस्य होता है। समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा माता–पिता बच्चों को उचित–अनुचित व्यवहार का ज्ञान करवाते हैं। व्यक्ति परिवार में रहकर ही सामाजिक मूल्यों परम्पराओं, विश्वासों, आदर्शों, प्रथाओं और नियमों से परिचित होता है तथा उन्हें आत्मसात करता है, जिससे उसका व्यवहार निर्धारित होता है। परिवार के सदस्य, माता–पिता, पति–पत्नी, भाई–बहिन आदि प्रेम, स्नेह, भावात्मक समर्थन, डाँट–फटकार व उपेक्षा के माध्यम से समाज के नियमों के अनुसार व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित करते हैं।

2. प्राथमिक समूह– सामाजिक नियंत्रण की प्रक्रिया में प्राथमिक समूहों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्राथमिक समूह के अन्तर्गत परिवार, मित्र–मण्डली, क्रीड़ा–समूह, पड़ौसी इत्यादि आते हैं। व्यक्ति बचपन में अपने पड़ौसियों व क्रीड़ा–साथियों के सम्पर्क में आता है और विभिन्न अन्तः क्रियाओं में भाग लेता है। इसी दौरान बच्चा जीवन की बुनियादी बातों व यौन भेद की जानकारी अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करता है। खेल समूह में खेल नियमों का पालन करना आवश्यक होता है। बच्चे के द्वारा इन नियमों का उल्लंघन करने पर उसे समूह से व्यंग्य व फटकार सुननी पड़ती है, जिससे उसका व्यवहार नियंत्रित होता है।

3. लोकरीतियाँ, लोकाचार व प्रथाएँ– सामाजिक प्रतिमान सामाजिक नियंत्रण के प्रमुख अभिकरण है। जनरीतियों के बारे में समनर ने कहा है कि जनरीतियां प्राकृतिक शक्तियों के समान होती है जिनका पालन व्यक्ति अचेतन रूप से करता है। जनरीतियाँ समाज में व्यवहार करने

की स्वीकृति एवं मान्यता प्राप्त विधियाँ है। इनकी उपेक्षा करने पर समाज द्वारा व्यक्ति की निंदा व आलोचना की जाती है। लोकाचार या रूढ़ियाँ अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण का प्रमुख साधन है। लोकाचारों में समूह कल्याण की भावना निहित होती है अतः व्यक्ति इनके पालन की अवहेलना नहीं कर सकता है। इनका पालन करना नैतिक दृष्टि से भी उचित माना जाता है । लोकाचार सकारात्मक व नकारात्मक होते हैं। सकारात्मक लोकाचारों में व्यक्ति को कुछ कार्य करने के निर्देश प्राप्त होते हैं, जैसे– सदा सत्य बोलो, ईमानदार बनो, बड़ों की आज्ञा का पालन करो आदि। नकारात्मक लोकाचार हमें कुछ कार्यों को करने से रोकते हैं, जैसे–झूठ मत बोलो, चोरी मत करो, हिंसा मत करो आदि। इनका उल्लंघन करने पर व्यक्ति को व्यंग्य, आलोचना, हास्य आदि का सामना करना पड़ता है। लोकाचार के महत्व को स्वीकार करते हुए डेविस कहते हैं कि सामान्य व्यक्तियों के मन में लोकाचारों से बड़ा कोई न्यायालय नहीं है।

4. धर्म तथा नैतिकता– धर्म व नैतिकता परस्पर सम्बन्धित अवधारणाएँ हैं। ये सामाजिक नियंत्रण का प्रमुख साधन हैं। धर्म व्यक्ति को 'क्या करना चाहिए' व 'क्या नहीं करना चाहिए' का आदर्श देता है। उसकी मान्यताएँ, विश्वास, परम्पराएँ, त्यौहार आदि किसी न किसी धर्म से अवश्य ही सम्बद्ध होते हैं। धर्म का सम्बन्ध अलौकिक शक्तियों में विश्वास से है। अलौकिक शक्तियों द्वारा कुछ अनिष्ट करने के भय से व्यक्ति धर्म के नियमों का पालन करता है। आगस्ट काम्ट ने कहा है कि धर्म नैतिकता का आधार है, अर्थात् बिना धर्म के नैतिकता का उद्भव नहीं हो सकता। नैतिकता व्यक्ति को उचित–अनुचित का बोध कराती है तथा उसे गलत कार्य करने से रोकती है। नैतिकता व्यवहार के स्वीकृत प्रतिमानों को निश्चित कर उसके विवेक को नियंत्रण करती है। नैतिकता व्यक्ति को सत्य, ईमानदारी, अहिंसा, समानता व न्याय के गुण सिखाती है। नैतिकता में भी समूह कल्याण की भावना निहित है। आज कल धर्म के स्थान पर नैतिकता सामाजिक नियंत्रण का प्रमुख साधन है।

5. सामाजिक नियंत्रण में राज्य की भूमिका– राज्य सामाजिक नियंत्रण का एक प्रभावशाली अभिकरण है। राज्य अपनी शक्तियों से समाज विरोधी तत्वों एवं अपराधियों पर अंकुश लगाता है। राज्य नागरिकों को विघटनकारी कार्य करने से रोकते हैं। राज्य, पुलिस, न्यायालय, कानून व जेल आदि अनेक माध्यमों के द्वारा सामाजिक नियंत्रण स्थापित करता है। गैर–कानूनी आचरण करने वालों के लिए राज्य दण्ड की व्यवस्था करता है तथा सामाजिक नियमों एवं कानूनों का पालन करने पर पुरस्कृत करता है। आधुनिक समाज में सामाजिक जटिलता की वृद्धि के कारण राज्य की भूमिका और अधिक बढ़ गयी है राज्य अपने क्षेत्र में आन्तरिक व बाह्य सुरक्षा प्रदान करने के साथ–साथ अनेक कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से लोगों में सुरक्षा की भावना विकसित करता है। इस प्रकार राज्य लोगों के व्यवहार को प्रभावशाली ढंग से नियंत्रित करता है।

6. कानून– आदिम काल से ही सामाजिक नियंत्रण में कानून की प्रमुख भूमिका रही है। कानून के द्वारा सामाजिक नियंत्रण दो प्रकार से किया जाता है, सकारात्मक एवं नकारात्मक। यदि समाज के लोगों द्वारा कानूनों को ध्यान में रखकर आचरण किया जाता है तो समाज ऐसे लोगों के लिए पदक, पुरस्कार, प्रमाण–पत्र आदि की व्यवस्था करता है। यह सकारात्मक सामाजिक नियंत्रण कहलाता है। इसके विपरीत यदि लोग कानून सम्मत व्यवहार न करके उनका उल्लंघन करते हैं, तो ऐसे अपराधियों को न्यायालयों द्वारा दण्डित किया जाता है। यह सामाजिक नियंत्रण का नकारात्मक तरीका है। कानून द्वारा सिर्फ व्यक्ति और समाज के व्यवहार को ही नियंत्रित नहीं किया जाता बल्कि विभिन्न सामाजिक समस्याओं पर नियंत्रण किया जाता है। जैसे कानून के द्वारा सती–प्रथा, छुआ–छूत, बाल–विवाह, चोरी, भ्रष्टाचार, बलात्कार, जैसी समस्याओं पर भी नियंत्रण पाने की कोशिश की गई है। समाज में लोग अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए हमेशा विचलनकारी व्यवहार करने के लिए तत्पर रहते हैं। ऐसे में सामाजिक नियंत्रण स्थापित करने के लिए कानून ही महत्वपूर्ण अभिकरण हो सकता है।

समाजीकरण एवं सामाजिक नियंत्रण

समाजीकरण एवं सामाजिक नियंत्रण में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। ये दोनों प्रक्रियाएँ साथ–साथ चलती रहती हैं। समाजीकरण के द्वारा व्यक्ति को सामाजिक मूल्यों, प्रतिमानों एवं आदर्शों के अनुरूप व्यवहार करना सिखाया जाता है जिससे वह समाज के मूल्यों एवं आदर्शों को आत्मसात् करता है तथा समाज का प्रकार्यात्मक सदस्य बनता है। समाजीकरण की प्रक्रिया में व्यक्ति समाज सम्मत व्यवहार करना सीखता है जिससे समाज में व्यवस्था बनी रहती है फलस्वरूप सामाजिक नियंत्रण स्थापित होता है।

ऑगबर्न ओर निमकॉफ का मानना है कि सामाजिक प्रतिमानों का व्यक्तियों द्वारा आंतरीकरण करने से ही समाज व्यवस्था बनी रहती है। समाजीकरण द्वारा पुरानी पीढ़ी नयी पीढ़ी को एक निश्चित व्यवहार करना सिखाती है। जिससे समाज में व्यवस्था बनी रहती है। इस प्रकार समाजीकरण की प्रक्रिया सामाजिक नियंत्रण का कार्य भी करती है। जिस तरह से समाजीकरण की प्रक्रिया सामाजिक नियंत्रण का कार्य करती है उसी प्रकार से सामाजिक नियंत्रण भी समाजीकरण में मदद करता है। सामाजिक नियंत्रण के द्वारा लोगों को सामाजिक नियमों का पालन करने व अपनी भूमिकाओं का निर्वाह सामाजिक प्रत्याशाओं के अनुरूप करने के लिए बाध्य किया जाता है।

ऑगबर्न एवं निमकॉफ का मत है कि सामाजिक

नियंत्रण समाजीकरण की असफलता को रोकता है। सामाजिक नियंत्रण के साधन तथा समाजीकरण की संस्थाएँ दोनों ही व्यक्ति को समाज द्वारा मान्य प्रथाओं, परम्पराओं तथा सामाजिक प्रतिमानों के अनुरूप आचरण करने का निर्देश देते हैं। इस प्रकार समाजीकरण एवं सामाजिक नियंत्रण में घनिष्ठ सम्बन्ध है। समाजीकरण जितना सफल होता है, सामाजिक नियंत्रण उतना ही प्रभावी होता जाता है। इस सम्बन्ध में फिचर का मत है कि "सामाजिक नियंत्रण समाजीकरण की प्रक्रिया का ही विस्तार है।"

सामाजिक नियंत्रण की आवश्यकता

किसी भी समाज का अस्तित्व एवं निरन्तरता बनाये रखने के लिए सामाजिक नियंत्रण आवश्यक है। संतुलन बनाये रखने हेतु मनुष्य की अराजक व व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों पर नियंत्रण लगाया जाता है। पॉल लैण्डिस का मानना है कि "मानव नियंत्रण के कारण ही मानव है।" समाज को व्यवस्थित व संगठित बनाये रखने तथा सामाजिक मूल्यों को प्राप्त करने के लिए सामाजिक नियंत्रण आवश्यक है। यदि समाज में नियंत्रण नहीं होगा तो समाज का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जायेगा। लोग एक दूसरे का सहयोग नहीं करेंगे। सामाजिक प्रतिमानों का उल्लंघन किया जायेगा। इस प्रकार के व्यवहारों से समाज की एकता व संगठन को बनाये रखना कठिन होगा।

समाज को व्यवस्थित एवं संगठित रखकर ही हम सामाजिक मूल्यों को प्राप्त कर सकते हैं तथा हमारी सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा कर सकते हैं।

सामाजिक नियंत्रण के द्वारा ही समाज में संगठन, एकता एवं व्यवस्था बनाये रखी जा सकती है। अतः सामाजिक नियंत्रण भी समाज की महती आवश्यकता है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत एवं अटल नियम है।
- किसी वस्तु, संगठन अथवा आकृति के ढाँचे में परिस्थितियों के अनुसार आयी भिन्नता को परिवर्तन कहते हैं।
- मैकाइवर एवं पेज ने अपनी पुस्तक सोसायटी (Socity) में सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन के द्वारा की है। उनके अनुसार समाज स्वयं ही "सामाजिक सम्बन्धों का जाल है।
- प्राचीन समाजों की तुलना में आधुनिक समाजों में परिवर्तन अधिक स्पष्ट रूप से दिखायी देता है।
- सामाजिक परिवर्तन के बारे में पूर्वानुमान करना कठिन है।
- सामाजिक परिवर्तन के कारण निम्न है–
  - ★ प्राकृतिक या भौगोलिक कारक
  - ★ जनसंख्यात्मक कारक
  - ★ सांस्कृतिक कारक
  - ★ प्रौद्योगीकीय कारक
  - ★ आर्थिक कारक
- जनसंख्या वृद्धि से समाज में गरीबी व बेरोजगारी उत्पन्न होती है। गरीबी समाज में संघर्ष व तनाव को जन्म देती है।
- संस्कृति में सम्मिलित आदर्श, विश्वास, धर्म, प्रथाएँ, संस्थाएँ, रूढ़ियाँ आदि हमारे सांस्कृतिक जीवन का प्रतिबिम्ब है।
- कार्ल मार्क्स ने सामाजिक परिवर्तन में आर्थिक कारकों को महत्वपूर्ण माना है।
- समाज में सन्तुलन व व्यवस्था बनाये रखने के लिए समाज के सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित किया जाता है।
- सामाजिक नियंत्रण की अवधारणा का प्रतिपादन सर्वप्रथम अमेरिकन समाजशास्त्री ई.ए. रॉस ने 1901 में अपनी कृति 'Social control' में व्यवस्थित ढंग से किया है।
- सामाजिक नियंत्रण के द्वारा समाज में तनाव व संघर्ष को कम किया जाता है तथा सहयोग को बढ़ाने का प्रयास किया जाता है।
- सामाजिक नियंत्रण में दण्ड एवं पुरस्कार दोनों विधियों का प्रयोग किया जाता है।
- सामाजिक नियंत्रण का वह स्वरूप जिसमें सलाह, अनुनय, शिक्षा एवं पुरस्कार के द्वारा व्यक्तियों के व्यवहार को नियंत्रित किया जाता है, सकारात्मक सामाजिक नियंत्रण कहलाता है।
- औपचारिक नियंत्रण स्थापित करने के लिए औपचारिक संस्थाओं यथा राज्य, कानून, पुलिस, जेल, न्यायालय आदि की व्यवस्था होती है।
- प्रथाएँ, जनरीतियाँ, सामाजिक मानदण्ड, धर्म, नैतिकता, हास्य, व्यंग्य, जनमत आदि अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण के साधन है।
- जनरीतियाँ समाज में व्यवहार करने की स्वीकृति एवं मान्यता प्राप्त विधियाँ है। इनकी उपेक्षा करने पर समाज द्वारा व्यक्ति की निंदा व आलोचना की जाती हैं।
- नैतिकता व्यवहार के स्वीकृत प्रतिमानों को निश्चित कर उसके विवेक को नियंत्रण करती है।
- नैतिकता व्यक्ति को सत्य, ईमानदारी, अहिंसा, समानता व न्याय के गुण सिखाती है।
- राज्य अपनी शक्तियों से समाज विरोधी तत्वों एवं अपराधियों पर अंकुश लगाता है।
- राज्य, पुलिस, न्यायालय, कानून व जेल आदि अनेक माध्यमों के द्वारा सामाजिक नियंत्रण स्थापित करता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. मैकाइवर एवं पेज के अनुसार सामाजिक परिवर्तन है–
   (अ) समाज की संस्कृति में परिवर्तन।
   (ब) सामाजिक संबन्धों में परिवर्तन।

(स) समाज के कार्यों में परिवर्तन।
(द) सामाजिक जीवन में परिवर्तन।

2. निम्न में से कौनसी स्थिति परिवर्तन के लिए उत्तरदायी है?
(अ) वस्तु (ब) समय
(स) भिन्नता (द) उपर्युक्त तीनों

3. सामाजिक परिवर्तन के लिए सांस्कृतिक विलम्बना का सिद्धान्त किस विद्वान ने दिया है?
(अ) आगबर्न (ब) दुर्खीम
(स) वेब्लिन (द) माल्थस

4. निम्न में से सामाजिक नियंत्रण का प्रकार नहीं है?
(अ) चेतन व अचेतन (ब) औपचारिक
(स) प्रकृति (द) सकारात्मक

5. "विपथगामी प्रवृत्तियों की कली को फूल बनने से पहले ही कुचल देना सामाजिक नियंत्रण है।" यह कथन किसका है?
(अ) ई.ए.रास (ब) पारसंस
(स) किंग्सले डेविस (द) कार्लमानहीम

6. निम्न में से कौनसा औपचारिक नियंत्रण का साधन है–
(अ) परिवार (ब) कानून
(स) प्रथाएँ (द) जनरीतियाँ

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'ऐस्से आन पापुलेशन' पुस्तक के लेखक कौन है?
2. शहरी जनसंख्या में वृद्धि कैसे होती है?
3. प्रौद्योगिकी का क्या अर्थ है?
4. सामाजिक नियंत्रण के चेतन व अचेतन स्वरूप का उल्लेख किस विद्वान ने किया है?
5. अनौपचारिक नियंत्रण के साधन कौन–कौनसे हैं?
6. सकारात्मक सामाजिक नियंत्रण क्या है?
7. 'सामान्य व्यक्तियों के मन में लोकाचारों से बड़ा कोई न्यायालय नहीं है।' यह कथन किसका है?
8. सीधी रेखा में होने वाला परिवर्तन कहलाता है?
9. गुरविच तथा मुरे ने सामाजिक नियंत्रण के कितने स्वरूप बताये हैं?
10. औपचारिक नियंत्रण के साधन लिखिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. सामाजिक परिवर्तन को परिभाषित कीजिए।
2. सामाजिक परिवर्तन के जनसंख्यात्मक कारक पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3. सामाजिक परिवर्तन की तीन विशेषताएँ लिखिए।
4. अनौपचारिक व औपचारिक सामाजिक नियंत्रण में अन्तर कीजिए।
5. कानून के माध्यम से सामाजिक नियंत्रण कैसे होता है?
6. "धर्म तथा नैतिकता सामाजिक नियंत्रण का प्रभावी साधन है।" कैसे?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. सामाजिक परिवर्तन को परिभाषित करते हुए, इसकी विशेषताएँ लिखिए।
2. सामाजिक परिवर्तन के प्रमुख कारणों की विवेचना कीजिए।
3. सामाजिक परिवर्तन के प्रकार लिखिए।
4. सामाजिक नियंत्रण के औपचारिक अभिकरण कौन–कौन से है? वर्णन कीजिए।
5. सामाजिक नियंत्रण के अनौपचारिक अभिकरणों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तरमाला–1. (ब) 2. (द) 3. (अ) 4. (स) 5. (ब) 6. (ब)